IJAER/July- August- 2021/Volume-10/Issue-1 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

लौकिक कथा–साहित्य में नारी स्वरूप का मूल्यांकन

Monika Dabe
Ph.D. Scholar
Department of sanskrit
Malwanchal University Indore (M.P.).

Ritu Bhardwaj
Supervisor
Department of sanskrit
Malwanchal University Indore (M.P.).

सार–

लोक–साहित्य में सामान्य लोक–समूह युगों से संचित अपनी भावनाओं और साधनों को अभिव्यक्ति प्रदान करता आया है। इसमें लोक–मानस प्रतिबिम्बित होता है। इसका प्रत्येक शब्द, प्रत्येक स्वर, प्रत्येक लय और प्रत्येक भाव सहज रूप से लोक का अपना है। बहुधा लोक–साहित्य के पर्याय के रूप में ग्राम्य–साहित्य शब्द का भी प्रयोग किया जाता है, किन्तु ग्राम्य साहित्य और लोक साहित्य में स्पष्ट अन्तर है। क्योंकि, ग्राम्य–साहित्य केवल ग्रामों तक सीमित है। इसके विपरीत लोक–साहित्य का क्षेत्र अधिक व्यापक और विस्तृत है। उसमें ग्राम्य और नगर सभी आ जाते हैं। इसी प्रकार लोक–साहित्य और जन–साहित्य में भी अन्तर है, क्योंकि जन–साहित्य अधिक सुगठित और निजी अस्तित्व के प्रति अपेक्षाकृत जागरूक समूह का साहित्य है, जो बहुधा राजनीतिक विचार–धारा से जुड़ा होता है। इसके अतिरिक्त जन साहित्य में जनकल्याण का मात्र और शिक्षा देने की प्रवृत्ति रहती है। उसमें सामान्यजन के अधिकारों और कर्तव्यों को अभिव्यक्ति मिलती है। इसके विपरीत वह लोक–साहित्य की भांति सहज और स्वाभाविक न होकर एक विशिष्ट उद्देश्य से युक्त होता है।

प्रस्तावना–

संस्कृत–लोक–कथा साहित्य में नारी के विविध रूपों का अत्यन्त विस्तृत, व्यापक, रोचक, मनोवैज्ञानिक और सजीव चित्रण किया गया है। इनमें देवियों, ऋषि–पत्नियों, अप्सराओं, यक्षणियों, किननरियों एवं अनेक मानवी स्त्रियाँ सम्मिलित हैं। मानवी नारी पात्रों में चतुर्वर्ण–ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के अतिरिक्त विभिन्न व्यवसायों में रत स्त्रियाँ भी सम्मिलित है, जैसे–कृषक, रजक, मल्लाह, चर्मकार, नापित, वेश्यायें, सखियां, दूतियाँ आदि। इन लोक–कथाओं में अनेक पशु–पक्षी मादा चरित्र भी उल्लेखनीय हैं। संस्कृत–लोक–कथाओं में विविध नारी रूपों के अन्तर्गत नायिका, परकीया, चेटी, गणिका, कुलटा आदि का विशद् दिग्दर्शन किया गया है। नायिकाओं में प्रायः सभी प्रकार के प्रमुख नारी चरित्रों के स्वभाव और व्यवहार का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक एवं सजीव चित्रण किया गया है। इन लोक–कथाओं में पार्वती, सीता, लक्ष्मी और भगवती जैसी देवियाँ भी हैं। उर्वशी, मेनका आदि अप्सरायें, यक्षणियाँ, किननरियाँ, ऋषि–कन्यायें, पिंगलिका, कलिंगसेना, रत्नप्रभा,, रूपशिखा, कलावती, दमयन्ती, आदि अनेक नारी पात्रों द्वारा पतिव्रत, त्याग, साहस, धैर्य, कर्तव्यनिष्ठा आदि गुणों पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही विभिन्न प्रकार की देवांगनाओं स्वकीया, मुग्धा, प्रगल्भा आदि नायिकाओं के साथ परकीया, खंडिता, चपला, परपुरूषों के प्रति आसकता, कामुक और दुःसाहसी स्त्रियों के कार्य–कलापों का बहुत विस्तार से प्रतिपादन किया गया है।

संस्कृत–लोक–कथा साहित्य में नायिकाओं के अतिरिक्त चेटियों, दासियों, सखियों, दूतियों, गणिकाओं, नर्तकियों, कुट्टनियों, सन्यासिनी का कृत्रिम वेश धारण करने वाली धूर्ता, धार्मिक प्रपंच और आडम्बर रचने वाली, जादू–टोना करने वाली सन्यासिनियों के रहस्यमय विधि–विधानों के रोचक चित्र अंकित किये गये हैं। संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उसमें विविध नारी पात्रों के अन्तः सौन्दर्य के अन्तर्गत उनके स्वभाव तथा गुणों एवं प्रवृत्ति का अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक तथा सजीव मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है।

विविध प्रसंगों में नारी के विभिन्न हाव–भावों, प्रेम, गर्व, लज्जा, मान, विनम्रता, शालीनता, धैर्य, साहस, प्रसन्नता, क्रोध, भय, रूदन, ग्लानि, क्षोभ आदि के अनेक सजीव चित्र दृष्टिगत होते हैं। इसी प्रकार नारी के बाहय–सौन्दर्य के अत्यन्त चित्ताकर्षक भव्य, आलंकारिक और मनोरम चित्र अंकित किये गये हैं। अनेक प्रसंगों में उनके विविध अंग–प्रत्यंगों की कोमलता, आकर्षण, मनोरम कान्ति के हृदयस्पर्शी चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। रूप और माधुर्य की छटा बिखेर दी गयी है। नारी–लावण्य के अतिरिक्त उनके अलंकार प्रसाधन वस्त्र, वेश–भूषा, श्रृंगारिक रूप–विन्यास का विस्तार से वर्णन किया गया है।

तत्कालीन समाज में, विशेष रूप से, परिवार में नारी के कन्या, पत्नी, प्रेयसी, माता, विधवा, सासं, ननद, आदि रूपों तथा उनके परस्पर सम्बन्धों का विस्तृत विवेचन किया गया है। परिवार में नारी के विविध रूपों के अन्तर्गत उसके अच्छे और बुरे दोनों ही रूपों को प्रस्तुत किया गया है। जहाँ उसमें माता–पिता तथा बन्धु–बान्धवों के प्रति अनुरकत, कर्त्तव्यनिष्ठ, पारिवारिक शालीनता, परम्परा, मर्यादा और लोक–लज्जा के प्रति दृढ़ता, भक्ति, निष्ठा, त्याग और धैर्य के साथ कष्ट भोगकर उनका पालन करने वाले अनेक नारी पात्र हैं, वहीं स्वच्छन्द प्रवृत्तिशीला, उच्छृंखल, हठी, गर्वोन्मत्ता, दुःसाहसी, क्रूर और नृशंस कर्मों में लिप्त, झूठ और प्रपंच, मिथ्या आचरण एवं हत्या जैसे क्रूर कर्मों से भी न घबराने वाली अनेक नारियों के उदाहरण दृष्टिगत होते हैं।

संस्कृत–लोक–कथा में विविध व्यवसायों में कार्य करने वाली ऐसी अनेक नारियों का चित्रण किया गया है, जो अपनी ओर अपने परिवार की उदरपूर्ति अथवा आजीविका के लिये समाज के विभिन्न वर्गों की सेवा करती थीं। इनमें दासियाँ, सेविकायें, परिचारिकायें, अन्तःपुर की रक्षिकायें, जासूस स्त्रियाँ, वेश्यायें, नर्तकियाँ, मालिन, धोबिन, नायिन एवं कृषक, मल्लाह और चर्मकार कन्यायें विशेष उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य में नारी के गृह–कार्यों के अतिरिक्त उनके विविध गृहेत्तर कार्य–कलापों तथा उनकी सामाजिक और धार्मिक स्थिति पर भी विस्तार से अनेक प्रसंगों में प्रकाश डाला गया है।

संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य के नारी–चित्रण की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उसके अधिकांश नारी पात्र लोक अथवा सामान्य जीवन से लिये गये हैं। यद्यपि उसमें, चमत्कार, अलौकिकता और अतिशयोक्ति भी झलकती . है। किन्तु अधिकतर प्रसंगों में यथार्थ का ही सहारा लिया गया है। यही कारण है कि संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य के नारी पात्र अत्यन्त सजीव, यथार्थ और विश्वसनीय हैं। साथ ही उसमें नारी व्यक्तित्व के विविध रूपों, उनके स्वभाव–व्यवहार तथा आचरण के साथ उनके कार्य–कलापों, क्रिया–प्रतिक्रिया का बड़ा ही रोचक यथार्थ, सजीव, हृदयग्राही और विश्वसनीय चित्रण किया गया है।

सम्पूर्ण संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य के आधार पर निष्कर्ष रूप से तत्कालीन स्त्री स्वतंत्र थी, शिक्षित थी, उसका अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व था, वह स्वेच्छा से यौन सम्बन्ध स्थापित करती थी, जीविकोपार्जन हेतु विविध व्यवसायों में जाती थी।

लोक–कथाओं का विषय

लोक–कथाओं का वर्ण्य–विषय अत्यन्त व्यापक और विस्तृत है। उसमें साधारण मानव राजा–रानी, स्त्री–पुरूष, गणिकाओं, पशु–पक्षी आदि का मनोरंजनपूर्ण चित्रण किया जाता है। लोक कथाओं में घटनाओं की विविधता, रोचकता, पाठकों के हृदय में कुतूहल उत्पन्न की क्षमता, हास्य व व्यंग्य की मनोरम छटा, हृदय को प्रभावित करने की उपदेशात्मक और कहीं–कहीं उत्कृष्ट काव्य की सी सरसता पर्याप्त मात्रा में पायी जाती है।1

लोक–कथाओं में शुद्ध काल्पनिक जगत् का मिश्रण मिलता है, कहीं उत्सुकता तथा कुतूहल है, कहीं घटना–वैचित्रय है, कहीं हास्य और विनोद है, कहीं गम्भीर उपदेश का मर्म है और कहीं सरस काव्य की मधुर छटा चमक उठी है।2

लोक–कथा में लोक–जीवन का विराट् चित्र मिलता है। उसमें मानवीय जीवन के साथ–साथ पशु–पक्षियों तथा अन्य नाना प्रकार के पदार्थों को पात्र के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है। जिस प्रकार मानव स्वभाव उसकी रूचि, अरूचि विविध मनोवृत्तियों और उसके कार्य–व्यापारों अथवा आचरण में विविधता परिलक्षित होती है। उसी प्रकार लोक–कथाओं में भी विविधता दृष्टिगत होती है।

लौकिक कथाओं का प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन प्रदान करना रहा है। यही कारण है कि लोक–रूचि के अनुरूप लोक–कथाओं में रोचकता की प्रधानता दिखलाई पड़ती है। लोक–कथाओं का रूप, देशकाल और परिस्थितियों की भिन्नता के कारण भले ही भिन्न रहा हो, किन्तु उनमें आश्चर्यजनक विषयगत समानता दिखलाई पड़ती है।

लोक–कथा–साहित्य का उद्गम व विकास

भारत को लोक–कथाओं का उद्गम स्थल स्वीकार किया जाता है। "भारत में वैदिक युग के भारतीयों के जीवन के प्रारम्भिकतम काल से ही अनेक प्रकार की कहानियाँ लोगों में प्रचलित थी, भले ही उनके विकास की प्रारम्भिक अवस्थाओं में अद्भुत कथा, लोक कथा कल्पित कथा अथवा पशु–कथा के रूप में उनमें भेद स्थापित करना व्यर्थ हो। साधारण सी कहानी का एक निश्चित उद्देश्य के लिये उपयोग में लाया जाना, उपदेशात्मक कथा का जीवनोपयोगी ज्ञान समझाने के लिए निश्चित विधि बन जाना कहानियों के इतिहास में एक स्पष्ट तथा महत्वपूर्ण कदम था।[3] ऋग्वेद लोक–कथा के उद्गम का मूल स्रोत हैं। "ऋग्वेद" के सम्वाद–सूक्तों तथा आख्यानों में लोक कथा के बीज विद्यमान हैं। ऋग्वेद की स्तुतिपपक ऋचाओं और सूक्तों में विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित अनेक मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद आख्यानों का उल्लेख है।

---

1 संस्कृति साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ, गोविन्द राम शर्मा, पृ० 123

2 संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ0 सत्य नारायण–पाण्डेय, पृ० 274

3 संस्कृत साहित्य का इतिहास, ए0वी०कीथ, अनुवादक डॉ० मंगलदेव शास्त्री, मोती लाल बनारासी दास दिल्ली, वाराणसी, पटना, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी, पृ0 300

इसके सम्वादों में कथा तत्वों की स्पष्ट झलक मिलती है। इस दृष्टि से ऋग्वेद का "सर्मापाणि सम्वाद" उदाहरणीय है–

नाहं तं वेद दभ्यं दभत्स यस्येदं दूतिरसरं पराकात्
न तं गूहन्ति स्त्रवतो गंभीरा हता इन्द्रेण पणयः गायध्वे।।
इमा गावः सरमे या ऐच्छः परिद्रिवो अन्तानसुभगे पतन्ति,
कस्त एना अव सृजादंयुध्व युतास्माक मायुष्या सन्ति तिम्मा।[4]

"ऋग्वेद" के मण्डूक सूक्त में एक ब्राहमण की तुलना टर्र–टर्र करते मेंढक से की गयी है–

योगक्षेमं व आदायाहं भूयासमुत्तर्म आ वो मूर्धानमक्रमीत्
अँधस्पदान्य उद्धदत मण्डूकाइवोदकान्मन्डूका उदकादिव।।[5]

ब्राह्मण ग्रन्थों तथा उपनिषदों में पशु–जगत् से सम्बन्धित अनेक उपदेशात्मक कथायें उपलब्ध हैं। रामायण और महाभारत में भी अनेक उपदेशात्मक कथायें हैं! महाभारत की कथाओं, आयायिकाओं और आख्यानों में कहानी के विकास के संकेत मिलते हैं। पंतजलि (50 ई0पूर्व) के महामाध्य में "अजाकृपाणीय" और "काकतालीय"[6] लोकोक्तियों और सॉप नेवले तथा कौओं और उल्लू की जन्मजात शत्रुता का उल्लेख है। इन कथाओं में पशु–पक्षियों को लेकर अनेक नीति कथाओं की लोकप्रियता का प्रमाण मिलता है। बौद्ध–जातकों में अनेक मनोरंजक तथा उपदेशात्मक कहानियाँ पायी जाती हैं। भगवान तथागत के पूर्व जन्मों की लगभग पाँच सौ कहानियों में मनुष्य, पशु–पक्षियों तथा लता–पादपों की रोचक कहानियाँ संगृहीत हैं। प्राचीनकाल से दन्त कथाओं और लोक–कथाओं के रूप में जो कहानियाँ चली आ रही थीं, उनका इन जानताकें में समावेश किया गया है।

वैदिक साहित्य

ऋग्वेद के सम्वाद सूक्तों तथा स्तुति–परक सूकतों में विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद आख्यान मिलते हैं, जिनका विस्तृत वर्णन यास्क के निरूक्त में, शौनक के वृहद्–देवता, कात्यायन सर्वानुक्रमणी की षड्गुरु शिष्य प्रणीत "वेदार्थ दीपिका", व्याख्या और सायण–भाष्य के उपलब्ध होता है। इसके अतिरिक्त वैदिक कथाओं पर आधारित नीति–शिक्षाओं का संकलन नीति मंजरी के अन्तर्गत किया गया। इसका रचनाकाल 4400 ई0 माना जाता है।[7] शतपथ ब्राह्मण में पुरूखा और उर्वशी, ताण्डव ब्राहमण में च्यवन, भार्गव और सुकनन्या–मानवी, ऐतरेप ब्राहमण में शुनःशेष की कथा, शतपथ ब्राहमण में दध्यड्–आधवर्ण की कथा अत्यन्त रोचक है। कठोपनिषद् की नचिकेता की कथा, छान्दोग्योपनिषद् की जानश्रुत आदि की कथायें भी उल्लेखनीय हैं। मध्ययुग में कथा–साहित्य का और अधिक विकास हुआ। जैन कथा कोश और बौद्ध जातकों में पालि भाषा में निबद्ध अनेक मनोरंजक कथायें मिलती हैं। इससे यह ज्ञात होता है कि वैदिक काल से ही कथा–साहित्य के बीज प्रस्फुटित हो चुके थे।

---

4 ऋग्वेद, 40–408

5 ऋग्वेद, दशम मण्डल, सूक्त 166(5)

6 संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ०0 सत्यनारायण पाण्डे, साहित्य भंडार मेरठ, 4996, पृ0 292

7 संस्कृत वाड्.मय, आचार्य बदलेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी, 4969, पृ0 249

निष्कर्ष–

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में लोक कथा–साहित्य में नारी के विभिन्न रूपों का सर्वांगणि विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अब तक इस पर इस दृष्टि से विचार नहीं हुआ है। नाट्यशास्त्र, दशरूपक आदि साहित्यशास्त्रीय ग्रंथों में वर्णित नायिका–भेद की कसौटी पर लोक कथाओं के नारी–पात्रों का परीक्षण अत्यन्त ज्ञानवर्धक है। सौन्दर्य ईश्वरीय विभूति है। अन्तः सौन्दर्य के उद्घाटक विविध प्रकार के मनोभाव अन्तःकरण में अंगड़ाई लेते हैं। विभिन्न मनःस्थितियों में नारी–हृदय को उदेलित करने वाले प्रेम, गर्व, लज्जा आदि भावों के सटीक अभिव्यंजन ने जहाँ एक ओर लोक–कथाओं में लोकोत्तर औदात्य की सृष्टि की है वहाँ दूसरी ओर कामुकता, छल, प्रपंच, द्वेष आदि के चित्रण द्वारा नारी–हृदय के डुष्णपक्ष का भी प्रस्तुतीकरण किया गया है। इस प्रकार नारी–चरित्र इन कथाओं में अपनी पूर्ण स्वाभाविकता के साथ अवतरित हुआ है।

लोक–कथाओं में यदि गृह की चहार दिवारी के अन्दर रहने वाली कन्या, प्रेयसी और माता के रूप में साध्वी नारी के दर्शन होते हैं तो घर की देहरी लाँघ कर लोक–मर्यादा का अतिक्रमण करने वाली पर–पुरूषरता स्त्रियों का चरित्र भी सोत्साह अंकित किया गया है। विधवा की दयनीय स्थिति का भी मार्मिक चित्रण यहाँ उपलब्ध है। लोक–कथा साहित्य में नारी के व्यावसायिक पक्ष का उद्घाटन करते हुए परिचारिका, गणिका, धोबिन मालिन आदि के कार्यकलापों पर सुविस्तृत प्रकाश डाला गया है। दैनिक गृह–कार्यों में व्यापत नारी के चित्रण में भी लोक–कथाकार सजग रहा है और साथ ही गायन, वादन, नृत्य आदि गृहेतर कार्यों में भी उसकी अभिरूचि को सोल्लास प्रदर्शित किया गया है। नारी की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति का भी यथातथ्य निरूपण लोक कथाओं में प्राप्त होता है। वास्तव में संस्कृत का लोक कथा साहित्य अधिकांशतः मध्यम तथा निम्नवर्ग की स्त्रियों के यथार्थ चित्रण की दृष्टि से चिरस्मरणीय रहेगा। भले ही आज साहित्य की अन्य विधाओं का पर्याप्त विकास हो गया हो किन्तु अपनी लोकानुरंजनकारिणी विशिष्टता के कारण लोक–कथाओं का महत्व यावच्चन्द्रादिवाकरौ अक्षुण्ण रहेगा।.

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- कथा–सरित्सागर एक : डॉ0 वाचस्पति. द्विवेदी, सुनील कुमार द्विवेदी, सांस्कृतिक अध्ययन चौखम्बा, औरियण्टालिया, वाराणसी, 1978
- कथासरित्सागर : डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल, बिहार, राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ।
- कथासरित्सागर तथा : डॉ0 एस0 एन0 प्रसाद, चौखम्बा औरियण्टालिया, भारतीय संस्कृति : वाराणसी, 1978
- हिन्दी साहित्य कोश : प्रधान सम्पादक, डॉ०0 धीरेन्द्र वर्मा, प्रकाशन बनारस ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी।
- संस्कृत साहित्य का इतिहास : डॉ0 ए0 वी0० कीथ, अनुवादक मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- संस्कृत हिन्दी कोश : वामन शिवराम आप्टे, द्वितीय संस्करण, 1969, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- सौन्दर्य शास्त्र के तत्व : रामकमल प्रकाशन, प्रा0 लि0, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 4966
- दशरूपक : धननन्जय, सम्पादक भोलाशंकर व्यास, वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन चौक, वाराणसी, 1960
- जातकमाला : आर्यशूर सम्पादक, सूर्यनारायण चौधरी, मोतीलाल बनारसीदास, द्वितीय संस्करण, 1984

- अमर कोश : अमर सिंह, श्री हरगोविन्द शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी